हुसैनआरा खातून और अन्य

बनाम

गृह सचिव, बिहार राज्य, पटना

(Hussainara Khatoon and Others

V.

Home Secretary, State of Bihar, Patna)

(26 फरवरी, 1979)

(न्यायाधिपति पी० एन० भगवती और ए० पी० सेन)

दण्ड प्रक्रिया संहिता, 1973 (1974 का 2)—धारा 167(2), परन्तुक—विचारणाधीन कैदियों के 15 दिन से अधिक की कालावधि के लिए निरोध को प्राधिकृत करते समय मजिस्ट्रेट को यन्त्रवत् कार्य नहीं करना चाहिए, बल्कि अपना यह समाधान भली प्रकार कर लेना चाहिए कि उन्हें समय-समय पर न्यायिक अभिरक्षा में प्रतिप्रेषित किए जाने के लिए पर्याप्त आधार विद्यमान हैं।

दण्ड प्रक्रिया संहिता, 1973 (1974 का 2)—धारा 468(2)—जिन विचारणाधीन कैदियों के विरुद्ध इस धारा में उपबन्धित परिसीमाकाल के भीतर आरोप-पत्र फ़ाइल नहीं किए जाते, उन्हें तत्काल छोड़ दिया जाना चाहिए, क्योंकि उनका और आगे निरोध विधि विरुद्ध और अनुच्छेद 21 का अतिक्रमण होगा।

दण्ड प्रक्रिया संहिता, 1973 (1974 का 2)—धारा 167(5)—यदि समन मामले में अन्वेषण अभियुक्त को गिरफ्तार किए जाने की तारीख से छह मास के भीतर पूरा न हुआ हो और मजिस्ट्रेट का यह समाधान न करा दिया गया हो कि विशेष कारणों से और न्याय के हित में छह मास की कालावधि के बाद भी अन्वेषण जारी रखना आवश्यक है, तो अभियुक्त को उन्मुक्त कर दिया जाना चाहिए।

प्रत्यर्थी बिहार राज्य में बहुत बड़ी संख्या में पुरुष, स्त्री और बच्चे

लम्बी कालावधियों से विचारणाधीन कैदियों के रूप में कारावास में बन्द थे। इनमें से अनेक मामलों में अन्वेषण में दो वर्ष से भी अधिक समय का विलम्ब हुआ था। कुछ मामलों में दण्ड प्रक्रिया संहिता की धारा 468 (2) में विहित परिसीमाकाल के भीतर आरोपपत्र फाइल नहीं किया गया था। उनके विषय में समाचारपत्र में विवरण प्रकाशित होने पर प्रस्तुत पिटीशन फाइल किया गया। उच्चतम न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत सामग्री से न्यायालय को इस बात का निश्चय नहीं हुआ कि विचारणाधीन कैदियों को दण्ड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 167(2) के परन्तुक द्वारा यथा-अपेक्षित नियत काल पर मजिस्ट्रेट के समक्ष पेश किया गया था या नहीं और जिन समन मामलों में अन्वेषण अभियुक्त को गिरफ्तार किए जाने की तारीख से छह मास के भीतर समाप्त नहीं हुआ था, उनमें आगे अन्वेषण जारी रखने से पूर्व धारा 167(5) में यथा अपेक्षित मजिस्ट्रेट का यह समाधान करा दिया गया था या नहीं कि विशेष कारणों से और न्याय के हित में छह मास की अवधि से आगे अन्वेषण जारी रखने की आवश्यकता है। प्रत्यर्थी को आवश्यक आदेश देते हुए,

अभिनिर्धारित—प्रतिशपथपत्र पढ़ने से हमें इस बात का निश्चय नहीं हुआ है कि विचारणाधीन उन कैदियों को, जिनकी विशिष्टियां उसमें दी गई हैं, दण्ड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 167(2) के परन्तुक द्वारा यथा-अपेक्षित नियत काल पर मजिस्ट्रेट के समक्ष पेश किया जाता रहा है या नहीं। न्यायालय ने जो ऐसे समुचित शपथपत्र में 3 मार्च, 1979 को या उसके पूर्व फाइल किया जाना चाहिए था, सरकार से यह जानना चाहा कि इन विचारणाधीन कैदियों को धारा 167(2) के परन्तुक की अपेक्षाओं का अनुपालन करते हुए नियत काल पर मजिस्ट्रेट के समक्ष पेश किया गया था या नहीं। धारा 167(2) के परन्तुक में कहा गया है कि यदि मजिस्ट्रेट का यह समाधान हो जाए कि ऐसा करने के लिए पर्याप्त आधार विद्यमान हैं तो वह अभियुक्त व्यक्ति के 15 दिन से अधिक की कालावधि के निरोध को प्राधिकृत कर सकता है। यह निश्चित है कि इन मामलों में सम्बन्धित मजिस्ट्रेटों ने यन्त्रवत् कार्य नहीं किया है, बल्कि अपना दिमाग लगाया है और अपना यह समाधान कर लिया है कि इन व्यक्तियों को दो से लेकर दस वर्ष से भी अधिक की कालावधियों के लिए समय-समय पर न्यायिक अभिरक्षा में प्रतिप्रेषित करने के पर्याप्त आधार विद्यमान हैं, यद्यपि यह स्पष्ट नहीं था कि इन व्यक्तियों को पुलिस अन्वेषण के प्रयोजन के लिए दो वर्ष से दस वर्ष तक की लम्बी कालावधि के लिए न्यायिक अभिरक्षा में प्रतिप्रेषित करने के पर्याप्त

आधारों की विद्यमानता के बारे में मजिस्ट्रेटों का समाधान कैसे हो सकता था। पटना उच्च न्यायालय को अब यह चाहिए कि वह विस्तृत जांच करने के पश्चात् इस मामले पर भी विचार करे। (पैरा 5)

जिन विचारणाधीन कैदियों के विरुद्ध पुलिस ने धारा 468 की उपधारा (2) में उपबन्धित परिसीमाकाल के भीतर आरोपपत्र फाइल नहीं किए हैं, उनके विरुद्ध कार्यवाही बिल्कुल नहीं की जा सकती और वे तत्काल उन्मोचित किए जाने के हकदार हैं, क्योंकि उनका और आगे निरोध विधि विरुद्ध और अनुच्छेद 21 के अधीन उनके मूल अधिकार का अतिक्रमण होगा। (पैरा 7)

दण्ड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 167(5) के अनुसार, यदि मजिस्ट्रेट द्वारा समन मामले के रूप में विचारणीय किसी मामले में अन्वेषण अभियुक्त को गिरफ्तार किए जाने की तारीख से छह मास की कालावधि के भीतर समाप्त नहीं होता, तो मजिस्ट्रेट अपराध में आगे अन्वेषण को रोकने के लिए आदेश करेगा जब तक कि अन्वेषण करने वाला अधिकारी मजिस्ट्रेट का यह समाधान नहीं करा देता कि विशेष कारणों से और न्याय के हित में छह मास की कालावधि से आगे अन्वेषण जारी रखना आवश्यक है। न्यायालय को इस बात का बिल्कुल निश्चय नहीं हो सका कि क्या इस उपबन्ध का अनुपालन किया गया है, क्योंकि बहुत से ऐसे मामले हैं जिनमें विचारणाधीन कैदियों के विरुद्ध आरोपित अपराध समन मामले के रूप से विचारणीय हैं और फिर भी वे छह मास से बहुत अधिक अनेक वर्षों की लम्बी कालावधियों से जेल में सड़ रहे हैं। अतः बिहार सरकार को यह निदेश दिया गया कि वह इन मामलों में जांच करे और जहां यह पाया जाए कि अन्वेषण मजिस्ट्रेट का यह समाधान किए बिना कि विशेष कारणों से और न्याय के हित में छह मास की अवधि से आगे अन्वेषण जारी रखना आवश्यक है, छह मास से अधिक की कालावधि के लिए चलता रहा है, वहां बिहार सरकार विचारणाधीन कैदियों को उस दशा में उन्मोचित कर देगी, यदि आज से एक मास की कालावधि के भीतर मजिस्ट्रेट से आवश्यक आदेश न प्राप्त कर लिए जाएं। (पैरा 8)

आरम्भिक अधिकारिता : 1979 का रिट पिटीशन संख्या 57.

पिटीशनरों की ओर से	श्रीमती के० हिंगोरानी
प्रत्यर्थी की ओर से	सर्वश्री लाल नारायण सिन्हा, यू० पी० सिंह और एस० एन० झा

1979(2) eILR(PAT) SC 1

महान्यायवादी की ओर से — सर्वश्री एस० वी० गुप्ते, महान्यायवादी और आर० एन० संचदे

अभिलेख-अधिवक्ता

पिटीशनरों की ओर से — श्रीमती के० हिंगोरानी

प्रत्यर्थी की ओर से — श्री यू० पी० सिंह

न्यायाधिपति पी० एन० भगवती और ए० पी० सेन ने न्यायालय का निम्नलिखित आदेश 26 फरवरी, 1979 को दिया ।

आदेश

बिहार सरकार ने तारीख 19 फरवरी, 1979 वाले आदेश में दिए गए हमारे सुझाव के अनुसरण में तारीख 9 फरवरी, 1979 वाले सरकारी आदेश के पैरा 2 (ई) के प्रस्तावित स्पष्टीकरण वाला एक टिप्पण हमारे समक्ष फाइल किया है । इस स्पष्टीकरण के पैरा 1 में यह कहा गया है कि जहां किसी मामले में पुलिस अन्वेषण में दो वर्ष से अधिक समय का विलम्ब हुआ है, वहाँ पुलिस अधीक्षक यह ध्यान रखेगा कि अन्वेषण शीघ्रता से पूरा हो जाए और पुलिस अन्तिम रिपोर्ट और आरोप-पत्र यथासम्भव शीघ्रता से प्रस्तुत कर दे और इसे सुनिश्चित करने का दायित्व व्यक्तिगत रूप से पुलिस अधीक्षक पर डाला गया है । यह जानकर हमें प्रसन्नता हुई है कि सरकार ने हमारे इस सुझाव को मान लिया है, किन्तु हमें इस बात का बिल्कुल विश्वास नहीं है कि क्या केवल यह उपबन्ध कर देना पर्याप्त होगा कि अन्वेषण शीघ्रता से पूरा किया जाएगा और अन्तिम रिपोर्ट या आरोप-पत्र यथासम्भव शीघ्रता से प्रस्तुत किया जाएगा । हमारा मत है कि राज्य सरकार को ऐसी युक्तियुक्त कालसीमा निर्धारित करनी चाहिए जिसके भीतर ये कदम उठाए जाने चाहिएं ताकि अन्तिम रिपोर्ट या आरोप-पत्र प्रस्तुत करने में आगे विलम्ब न हो । हमारी समझ में यह नहीं आता कि पुलिस के अन्वेषण में दो वर्ष की लम्बी कालावधि कैसे लग सकती है और यदि पुलिस का अन्वेषण दो वर्षों के भीतर पूरा नहीं हो सकता, तो निश्चय ही बिहार राज्य के पुलिस बल में कुछ न कुछ मौलिक दोष है । ऐसा प्रतीत होता हैं कि ऐसे असंख्य मामले हैं जिनमें पुलिस अन्वेषण दो वर्ष से भी अधिक समय से पूरा नहीं हुआ है और लोग विचारणाधीन कैदियों के रूप में लम्बी

कालावधि तक जेल में रहे हैं। जहाँ तक न्याय और व्यवस्था के प्रशासन का सम्बन्ध है, यह हृदय विदारक स्थिति है। इसलिए हमारा सुझाव है कि ऐसे मामलों में जिनमें पुलिस अन्वेषण में दो वर्ष से भी अधिक का विलम्ब हुआ है, उनमें पुलिस द्वारा अन्तिम रिपोर्ट या आरोप-पत्र तीन मास की अतिरिक्त कालावधि के भीतर प्रस्तुत कर दिया जाना चाहिए और यदि ऐसा नहीं किया जाता, तो राज्य सरकार का ऐसे मामलों को वापिस ले लेना उचित होगा, क्योंकि यदि दो वर्ष से भी अधिक कालावधि और तीन मास की अतिरिक्त कालावधि के पश्चात् पुलिस आरोप-पत्र फाइल करने में समर्थ नहीं हुई है-तो यह उपधारणा युक्तियुक्त रूप से की जा सकती है कि गिरफ्तार किए गए व्यक्तियों के विरुद्ध कोई मामला नहीं बनता।

2. बिहार सरकार ने बिहार के सहायक कारावास महानिरीक्षक श्री मृणमय चौधरी द्वारा प्रस्तुत प्रतिशपथपत्र भी फाइल किया है, जिसमें उन 18 विचारणाधीन व्यक्तियों के सम्बन्ध में जिन्हें उनके व्यक्तिगत बन्धपत्र के आधार पर उन्मोचित करने का आदेश हमने दिया है विशिष्टियां उपवर्णित हैं। प्रतिशपथपत्र में दी गई विशिष्टियां बहुत ही दुखद हैं। प्रतिशपथपत्र से ऐसा प्रतीत होता है कि बहुत-सी स्त्रियां कैदी हैं, जिन पर किसी अपराध का आरोप लगाए बिना ही उन्हें जेल में केवल इसलिए रखा गया है कि वे किसी अपराध की शिकार हुई हैं। या साक्ष्य देने के लिए उनकी आवश्यकता है या वे "संरक्षात्मक अभिरक्षा" में हैं। 'संरक्षात्मक अभिरक्षा' अभिव्यक्ति वास्तव में और सच्चाई के रूप में कारावास को छुपाने के लिए मधुर अभिव्यक्ति है। इस अभिव्यक्ति का आशय—अन्तरआत्मा को संतुष्ट करने के लिए है। इस बात से इनकार नहीं किया जा सकता कि जिन स्त्रियों को संरक्षात्मक अभिरक्षा' के बहाने जेल में रखा गया है, उन्हें अपने किसी कसूर के बिना लम्बी कालावधि तक अनिच्छा से स्वाधीनता से वंचित रहना पड़ा है। हम यह बता देना चाहते हैं जि तथा कथित 'संरक्षात्मक अभिरक्षा' संविधान के अनुच्छेद 21 के अधीन गारण्टीकृत दैहिक स्वाधीनता के नृशंस अतिक्रमण से कम कुछ नहीं है, क्योंकि हमारी जानकारी के अनुसार, विधि का ऐसा कोई उपबन्ध नहीं है जिसके अधीन किसी स्त्री को संरक्षात्मक अभिरक्षा' के रूप में या केवल इसलिये जेल में रखा जा सके कि साक्ष्य देने के लिए उसकी आवश्यकता है। सामाजिक कल्याण वाले राज्य में सरकार को ऐसी स्त्रियों और बच्चों की देखभाल के प्रयोजन से बचाव और कल्याण-गृह स्थापित करने चाहिए जिनके पास और कहीं जाने का स्थान नहीं है और जिनकी देखभाल समाज अन्यथा नहीं करता। उन स्त्रियों और बच्चों की संरक्षा करना सरकार

का कर्तव्य है जो गृहहीन या अनाथ हैं और यह आश्चर्य की बात है कि बिहार सरकार ने यह स्पष्टीकरण दिया है कि उसे विवश होकर स्त्रियों को इसलिए 'संरक्षात्मक अभिरक्षा' के लिए जेल में रखना पड़ा क्योंकि राज्य द्वारा चलाया जा रहा कल्याण केन्द्र बन्द हो गया था, हम निदेश देते हैं कि उन सभी स्त्रियों और बच्चों को जो बिहार राज्य में 'संरक्षात्मक अभिरक्षा' के लिए जेलों में हैं या जो इसलिए जेल में हैं कि साक्ष्य देने के लिए उनकी उपस्थिति की आवश्यकता है या जो अपराध के शिकार हैं, उन्मोचित कर दिया जाए और तत्काल कल्याण-केन्द्रों या बचाव केन्द्रों में ले जाया जाए और वहां रखा जाए तथा उनकी समुचित रूप से देखभाल की जाए।

3. प्रतिशपथपत्र से हमें यह भी पता चला है कि भोला महतो 23 फरवरी, 1968 से 16 फरवरी, 1979 तक जेल में था और 16 फरवरी, 1979 को उसे तारीख 5 फरवरी, 1979 वाले हमारे निदेश के अनुसरण में उसके स्वीय बन्धपत्र के आधार पर उन्मोचित किया गया था। वह भारतीय दण्ड संहिता की धारा 363 और 368 के अधीन वाले मामले में अभियुक्त है और उसे 13 सितम्बर, 1972 को सेशन न्यायालय के सुपुर्द किया गया था, किन्तु उसका सेशन विचारण अभी तक प्रारम्भ नहीं हुआ है। यह बड़े आश्चर्य की बात है कि ऐसे व्यक्ति का सेशन विचारण लगभग सात वर्ष तक भी प्रारम्भ नहीं हुआ है जिसे बहुत पहले 13 सितम्बर, 1972 को सेशन न्यायालय के सुपुर्द किया गया था। हम निदेश देते हैं कि पटना का सेशन न्यायाधीश पटना उच्च न्यायालय के माध्यम से इस न्यायालय को स्पष्टीकरण प्रस्तुत करे कि भोला महतो का सेशन विचारण अभी तक प्रारम्भ क्यों नहीं हुआ। इस मामले में हम पटना उच्च न्यायालय का ध्यान भी आकृष्ट करना चाहेंगे। यही बात राम सागर मिस्त्री के विषय में भी कही जा सकती है, जिसे 28 मार्च, 1971 को जेल में डाला गया था और 28 जून, 1972 को भारतीय दण्ड संहिता की धारा 395 के अधीन आरोप के आधार पर सेशन न्यायालय के सुपुर्द किया गया था, किन्तु जिसका सेशन न्यायालय के समक्ष विचारण अभी तक प्रारम्भ नहीं हुआ है, यद्यपि उसकी सुपुर्दगी की तारीख से 6 वर्ष से भी अधिक की कालावधि व्यतीत हो चुकी है और कारावास में उसके डाले जाने की तारीख से 8 वर्ष की कालावधि व्यतीत हो चुकी है।

4. प्रतिशपथपत्र से यह दर्शित होता है कि बल्लू राय, जिसके विषय में यह रिपोर्ट है कि वह नक्सलवादी है, 15 मई, 1975 से जेल में है।

उसके विषय में यह अभिकथित है कि वह पांच मामलों में अन्तर्वलित है जो प्रतिशपथपत्र में उपवर्णित हैं। जहां तक उसका सम्बन्ध है उसे मजिस्ट्रेट को, जिसके समक्ष उसे पेश किया जाएगा, यह आवेदन करने का हक होगा कि उसे जमानत पर या उसके स्वीय बन्धपत्र के आधार पर उन्मोचित कर दिया जाए और मजिस्ट्रेट मोटे तौर से किए गए उन मार्ग दर्शनों के अनुसार आवेदन पर विचार करेगा जोकि हमने तारीख 12 फरवरी, 1979 वाले अपने निर्णय में अधिकथित किया है।

5. प्रतिशपथपत्र पढ़ने से हमें इस बात का निश्चय नहीं हुआ है कि विचारणाधीन उन कैदियों को, जिनकी विशिष्टियां उसमें दी गई हैं, दण्ड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 167 (2) के परन्तुक द्वारा यथा-अपेक्षित नियत काल पर मजिस्ट्रेट के समक्ष पेश किया जाता रहा है या नहीं। हम ऐसे समुचित शपथपत्र में जोकि 3 मार्च, 1979 को या उसके पूर्व फाइल किया जाए सरकार से यह जानना चाहेंगे कि इन विचारणाधीन कैदियों को धारा 167 (2) के परन्तुक की अपेक्षाओं का अनुपालन करते हुए, नियत काल पर मजिस्ट्रेट के समक्ष पेश किया गया था या नहीं। धारा 167(2) के परन्तुक में कहा गया है कि यदि मजिस्ट्रेट का यह समाधान हो जाए कि ऐसा करने के लिए पर्याप्त आधार विद्यमान हैं, तो वह अभियुक्त व्यक्ति के 15 दिन से अधिक की कालावधि के निरोध को प्राधिकृत कर सकता है। हमें आशा और विश्वास है कि इन मामलों में सम्बन्धित मजिस्ट्रेटों ने यन्त्रवत् कार्य नहीं किया है, बल्कि अपना दिमाग लगाया है और अपना यह समाधान कर लिया है कि इन व्यक्तियों को दो से लेकर दस वर्ष से भी अधिक की कालावधियों के लिए समय-समय पर न्यायिक अभिरक्षा में प्रति प्रेषित करने के पर्याप्त आधार विद्यमान हैं, यद्यपि हमारी समझ में यह नहीं आता कि इन व्यक्तियों को पुलिस अन्वेषण के प्रयोजन के लिए दो वर्ष से दस वर्ष तक की लम्बी कालावधि के लिए न्यायिक अभिरक्षा में प्रतिप्रेषित करने के पर्याप्त आधारों की विद्यमानता के बारे में मजिस्ट्रेटों का समाधान कैसे हो सकता था। हम चाहते हैं कि पटना उच्च न्यायालय विस्तृत जांच करने पश्चात् इस विषय पर भी विचार करे।

6. बिहार सरकार ने हमारे समक्ष एक सूची भी फाइल की है जिसमें उन विचारणाधीन कैदियों की विशिष्टियां दी गई हैं जिन्हें बिहार में 1 फरवरी, 1979 तक 18 मास से भी अधिक के लिए बिहार की 17 जेलों में परिरुद्ध रखा गया है। सारणी से यह दर्शित होता है कि इन जेलों में लम्बी काला-

वधि से विचारणाधीन कैदी परिरुद्ध हैं और कुछ मामलों में ये कालावधियां उस अधिकतम दण्ड से भी अधिक हैं जो उन्हें उस दशा में दिया जा सकता था, जब उन्हें उनके विरुद्ध आरोपित अपराधों को अपराधी पाया जाता। उदाहरण के लिए, मद संख्या 30 के सामने, हम यह पाते है कि लम्बोदर गोराईं नाम का एक व्यक्ति आयुध अधिनियम की धारा 25 के अधीन अपराध के लिए जिसके लिए अधिकतम दण्ड दो वर्ष है, 18 जून, 1970 से ही रांची जेल में है जिसके परिणामस्वरूप वह ऐसे अपराध के लिए 8-1/2 वर्ष तक विचारणाधीन कैदी के रूप में जेल में रह चुका हैं जिसके लिए दोषसिद्ध हो जाने पर भी उसे दो वर्ष से अधिक का कारावास नहीं दिया जा सकता था। सारणी में ऐसे अनेक मामले हैं, किन्तु सारणी से आसानी से उनकी पहचान करना सम्भव नहीं है, क्योंकि सारणी में विचारणाधीन कैदियों के नाम बड़ी संख्या में विद्यमान हैं। अतः हम बिहार सरकार को निदेश देते हैं कि वह 3 मार्च, 1979 को या उससे पूर्व एक पुनरीक्षित सारणी प्रस्तुत करे जिसमें उन्हें मोटे तौर से दो प्रवर्गों, एक छोटे अपराधों के और दूसरा बड़े अपराधों के प्रवर्ग में विभाजित करने के पश्चात् इन जेलों में विचारणाधीन कैदियों की वर्षानुसार अलग-अलग विशिष्टियां दर्शित की गई हों।

7. हमारा ध्यान दण्ड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 468 की ओर भी दिलाया गया है जिसकी उपधारा (1) में यह उपबन्ध है कि इस संहिता में अन्यत्र अन्यथा यथा उपबन्धित के सिवाय, कोई न्यायालय उपधारा (2) में विनिर्दिष्ट प्रवर्ग के किसी अपराध का संज्ञान परिसीमा काल की समाप्ति के पश्चात् नहीं करेगा और उपधारा (2) में उपबन्धित परिसीमा काल, यदि अपराध केवल जुर्माने से दण्डनीय है तो छह मास, यदि अपराध एक वर्ष से अनधिक की कालावधि के कारावास से दण्डनीय है, तो एक वर्ष, और यदि अपराध एक वर्ष से अधिक किन्तु तीन वर्ष से अनधिक की कालावधि के कारावास से दण्डनीय है, तो तीन वर्ष होगा। इसलिए यह उल्लेखनीय है कि जिन विचारणाधीन कैदियों के विरुद्ध पुलिस ने धारा 468 की उपधारा (2) में उपबन्धित परिसीमा काल के भीतर आरोप-पत्र फाइल नहीं किए हैं, उनके विरुद्ध कार्यवाही बिल्कुल नहीं की जा सकती और वे तत्काल उन्मोचित किए जाने के हकदार हैं, क्योंकि उनका और आगे निरोध विधि-विरुद्ध और अनुच्छेद 21 के अधीन उनके मूल अधिकार का अतिक्रमण होगा। इसलिए हम बिहार सरकार को निदेश देते हैं कि वह उन विचारणाधीन कैदियों के मामलों की संवीक्षा करे, जिन पर ऐसे अपराधों का आरोप है जो केवल जुर्माने से दण्डनीय हैं या एक वर्ष से अनधिक की

कालावधि के कारावास से दण्डनीय हैं या एक वर्ष से अधिक किन्तु तीन वर्ष से अनधिक की कालावधि के कारावास से दण्डनीय हैं और उनमें से ऐसे लोगों को उन्मोचित कर दे, जिनके विरुद्ध परिसीमा काल समाप्त हो जाने के कारण कार्यवाही नहीं की जा सकती। बिहार सरकार आज से छह सप्ताह की कालावाधि के भीतर इस निदेश को कार्यान्वित कर देगी और विशिष्टियों सहित अनुपालन रिपोर्ट इस न्यायालय को पहले चार सप्ताह के अन्त में और फिर अगले दो सप्ताह के अन्त में प्रस्तुत की जाएगी।

8. दण्ड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 167(5) से हम यह भी पाते हैं कि यदि मजिस्ट्रेट द्वारा समन मामले के रूप में विचारणीय किसी मामले में अन्वेषण अभियुक्त को गिरफ्तार किए जाने की तारीख से छह मास की कालावधि के भीतर समाप्त नहीं होता, तो मजिस्ट्रेट अपराध में आगे अन्वेषण को रोकने के लिए आदेश करेगा, जब तक कि अन्वेषण करने वाला अधिकारी मजिस्ट्रेट का यह समाधान नहीं करा देता कि विशेष कारणों से और न्याय के हित में छह मास की कालावधि से आगे अन्वेषण जारी रखना आवश्यक है। हमें इस बात का बिल्कुल निश्चय नहीं है कि क्या इस उपबन्ध का अनुपालन किया गया है, क्योंकि बहुत से ऐसे मामले हैं जिनमें विचारणाधीन कैदियों के विरुद्ध आरोपित अपराध समन मामले के रूप में विचारणीय हैं फिर भी वे छह मास से बहुत अधिक अनेक वर्षों की लम्बी कालावधियों से जेल में सड़ रहे हैं। अतः हम बिहार सरकार को निदेश देते हैं कि वह इन मामलों में जांच करे और जहां यह पाया जाए कि अन्वेषण मजिस्ट्रेट का यह समाधान किए बिना कि विशेष कारणों से और न्याय के हित में छह मास की अवधि से आगे अन्वेषण जारी रखना आवश्यक है, छह मास से अधिक की कालावधि के लिए चलता रहा है वहां बिहार सरकार विचारणाधीन कैदियों को उस दशा में उन्मोचित कर देगी यदि आज से एक मास की कालावधि के भीतर मजिस्ट्रेट से आवश्यक आदेश न प्राप्त कर लिए जाएं। हम उच्च न्यायालय से भी इस मामले की ओर ध्यान देने और अपना यह समाधान करने का निवेदन करते हैं कि क्या बिहार में मजिस्ट्रेट धारा 167(5) के उपबन्धों का अनुपालन करते रहे हैं।

9. हम रिट पिटीशन की सुनवाई को 5 मार्च, 1979 तक के लिए स्थगित करते हैं और उस तारीख को अवधारण के लिए उत्पन्न होने वाले विभिन्न प्रश्नों के विषय में गुणागुण के आधार पर सुनवाई करके रिट पिटीशन का निपटारा करेंगे।

श्या०/श्री०

तदनुसार आदेश किया गया।